पात्र-परिचय

पुरुष

१	सूत्रधार	नाटकक स्थापक ।
२	शंकर	महादेव, नायक, तपस्वी, वर ।
३	कामदेव	कामक देवता ।
४	नारद	मुनि, घटक ।
५	हिमालय	पर्वतराज, गौरीक पिता ।
६	पुरोहित	विवाह करओनिहार ।
७	ब्रह्मा	प्रसिद्ध देवता ।



स्त्री

१	नटी	सूत्रधारक स्त्री ।
२	गौरी	हिमालयक कन्या, नायिका ।
३	सखी	गौरीक सखी ।
४	रति	कामदेवक स्त्री ।
५	मेना	हिमालयक पत्नी, गौरीक माए ।
६	नैना	योगिनी देवता ।



ॐ नमः सरस्वत्यै

कवि लाल विरचितं

गौरीस्वयंवरनाटकम्[1]

स्फुरच्चन्द्रखण्डं लसच्छुण्डदण्डं
रणद्भृङ्गगण्डं विराजत्त्रिपुण्ड्रम् ।
समस्तारिमुण्ड - प्रणाशातिशौण्डं
भजे मञ्जुकाण्डं गणेशं प्रचण्डम् ॥१॥

अप्यच्च—

मौलौ भाति तरङ्ग-रङ्गसहिता मन्दाकिनी पावनी,
भाले चन्द्र-धनञ्जयौ च, हृदये व्यालावली मञ्जुला ।
अर्द्धाङ्गे गिरिजा सुपद्मनयना मुक्तागुणै र्भूषिता,
स त्वा रक्षतु सादरं पशुपति र्यश्चास्ति विश्वेश्वरः ॥२॥

श्रीदुर्गा श्रीमाधव श्रीगणेश

मनोरम चन्द्रमाक खण्ड (अर्धचन्द्र) सँ युक्त सुँड़रूपी दण्ड (डंटा) सँ शोभित, गण्डस्थल (कल्ला) पर गुञ्जैत भौँरा सँ युक्त, (कपार पर) त्रिपुंड्र (भस्मक तीन रेखा) सँ शोभित, सकल शत्रुक मूड़ीक नाशकरबा मे पराक्रमी (शौण्ड) सुन्दर काण्ड (मदधाराक स्थान गण्डस्थल) वाला, उग्रस्वरूप गणेशक वन्दना करैत छी ॥१॥

दोसरो पद्य—

(जाहि शिवक) माथ पर तरङ्गक (लहरिक) छटा - वाली • पवित्र कल्याणिहारिणि गङ्गा, कपार पर चन्द्रमा ओ अग्नि, हृदय पर सुन्दर साप सभ, तथा आधा अंग मे मोतीक माला सभ सँ सजाओल कमलसनक आँखिवाली पार्वती शोभित छथिन्ह से महादेव (पशुपति) आदरपूर्वक अहाँक रक्षा करथु जे संसारक ईश्वर थिकाह ॥२॥

1-नाटिका - प्र० ।

अपि च—

निशाऽधिनाथभूषणा महामृगेन्द्रवाहना
त्रिनेत्र-हंसवाहनादिभिः सदैव वन्दिता ।
कपाल-मालधारिणी सुरारिदुष्टदारिणी
सुरौघ-भव्यकारिणी सदा तनोतु वः शिवम् ॥३॥
प्रणम्य शङ्करं देवीं शाङ्करीं च गजाननम् ।
कविलालः करोत्येनां गौरीस्वयंवर[3]—नाटकम्[4] ॥४॥

नाट-रागे गीतम्—१

जय हरिगमनी[1], जय हरिगमनी, देथु अभय वर हर-रमनी ॥ध्रु०॥
अति विकराल कपाल-माल ग्रिम[5],
शोभित कुच-तट भलक मनी ।
ललित कच तर छपित छपाकर,
भुज पर भूषण[6] भुजग फनी ॥

आओरो—

चन्द्रमारूपी गहना सँ युक्त, महान् सिंहक वाहन (सवारी) वाली, महादेव-ब्रह्मा (हंसवाहन) आदि देवता सँ सतत पूजित कपाल (मनुष्यक मुण्ड) क माला धारण कयने, देवताक शत्रु ओ दुष्ट कें मारनिहारि ओ देवतालोकनिक कल्याण कएनिहारि (भगवती) अहाँलोकनिक सतत कल्याण करथु ।३।

शंकरभगवान्, गौरी (शांकरी) ओ गणेश कें प्रणाम कए कविलाल एहि गौरीस्वयंवरनाटक कें बनबैत छथि ।४।

नाट-राग मे गीत—१

सिंहवाहिनी भगवतीक जय हो, जय हो । ओ महादेवक पत्नी हमरा-लोकनि कें अभयदान देथु । हुनक गरा (ग्रिम=ग्रीवा) मे अत्यन्त

१—एहिठाम 'हरिगमनी' पद मे श्लेष अछि । ओ ताहि सं विरोधाभास अलंकार होइत अछि—हरि=विष्णु, तनिक पत्नी, 'हरगमनी'=महादेवक पत्नी कोना होइ-तीह ? उत्तर अछि—'हरि=सिंह, ताहि पर चलयवाली' अर्थ कएने विरोधक परि-हार होइछ । २—शार्ङ्गिण—ह० । ३-गौरीसंवर-ह० । ४-नटिकाम्—प्र० । ५—ग्रिव—ह० । ६-भूषित-ह० ।

खप्पर वर करवाल-कलित कर,
शुम्भ-निशुम्भ-दम्भ-दमनी ।
रिपु भट विकट निकट झटपट कए
धए पटकल चटपट अवनी ॥
कुपित-वदन पर नयन विराजित,
अरुण-अरुण युग कमल सनी ।
लह लह रसन, दशन दाड़िम बिज,
निजगण जन मन दुख-शमनी ॥
सुरनर मुनि गण, हरखित सभें सुनि
हरिहर घर के तोहरि सनी ।
रक्तबीज महिषासुर मारल
असुर संहारल समर घनी ॥

डराओन मनुष्यक मुड़ीक माला छन्हि । स्तनक कात मे मणि चमकि रहलनि अछि । नमड़ल केशक तर मे चन्द्रमा (छपाकर=क्षपाकर) नुका-एल (छपित) छथि । बाँहि पर महाविषधर (फणावला) साँपक गहना छनि । हाथ मे उत्तम खप्पर ओ तरुआरि शोभित छनि । शुम्भ ओ निशुम्भ नामक राक्षसक अहंकार के दमन कएनिहारि छथि । विक-राल शत्रु योद्धा कें भट दए लग आनि कें फुर्ती सँ पृथ्वी पर पटकि देने छथि । क्रोधित मुखमण्डल पर दुनू आँखि दू गोट लाल कमल सन लगैत छनि । जीह (रसना) लहलहाइत छनि । दाँत दाड़िमक (अनारक) बीया सन लगैत छनि । अपना लोकक (सेवकक) मनक दुःखक शमन (शान्ति) करैत छथि । (हिनक ई चरित) सुनि कें देवता मनुष्य ओ मुनि सभ आनन्दित भए कें कहैत छथि जे विष्णु ओ महादेव घर मे अहाँ सनक के छनि ? अर्थात् क्यो नहि । अहाँ रक्तबीज ओ महिषासुर नामक प्रबल राक्षस कें मारने छी ओ घनघोर युद्ध मे दैत्य सभक संहार कएने छी । हमर बुद्धि अथलाह भए गेल अछि जकर गति (सुधार) अहीँक चरण पर अछि तेँ एको क्षण हमरा नहि बिसरू । संसारक

हमरि कुमति मति बुध पद पर्जे गति
विसरिअ मोहि जनु एकओ छनी ।
जगत-जननि पद-पंकज मधुकर
सरस सुकवि एहु लाल भनो ॥

(नान्द्यन्ते सूत्रधारः)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । (परितोऽवलोक्य) अहो ! देवसभेवाऽवलोक्यते । तथा हि—

दोहा

सबुध मित्र गुरु कवि-सहित, अतिविचित्र निरमान ।
सरस कलाकर राजिता, देवसभाक समान ॥१॥
काव्य-सुधारस-पायिनी, किन्नर-निकर विराज ।
रंगभूमि अमरावती, लाग तेहन सनि आज ॥२॥

माए (भगवती) क चरण-कमलक भौंरा सरसकवि लाल एहि गीतकें गओलनि अछि ॥

(नाटकक मङ्गलगीतक (नान्दीक) बाद सूत्रधार प्रवेश करैत छथि)

सूत्र॰—अधिक विस्तार करब उचित नहि । (चारु दिस देखि) अहो ! देवसभे कें देखि रहल छी । जेना कि—

दोहा

(एहि दोहा सभक अर्थ देवसभा ओ राजसभा दुनू पक्ष मे लगैत अछि । कोष्ठ मे देल अर्थ देवसभा-पक्षक थिक)—

(बुधग्रह) विद्वान् लोकनिक सहित मित्रवर्ग (सूर्य), गुरु=महामहोपाध्याय लोकनि (बृहस्पति), कवि (शुक्रग्रह)=कविलाल, कविरत्न आदि सहित, अत्यन्त अद्भुत सनक जुटाओल गेल अछि, सभ कलाकर (चन्द्रमा)=कलाकार लोकनि सँ शोभित ई सभा देवसभाक समाने अछि ॥१॥

काव्यरूपी अमृतक रस-पान कयनिहार लोकनि जेना किन्नर (-देवगणविशेष) क समुदायक रूपमे शोभित छथि, तहिना सनक आइ ई रंगभूमि=सभास्थल अमरावती (इन्द्रक नगरी)=मिथिलाक एक प्रसिद्ध नगरी जे कोइलख गाम सँ भौर धरि छल, लगैत अछि ॥२॥

देवसभा सम भागवस, सबे विधि सरस विशाल ।
देथु अभय वर हरषि हर, गोचर कर कविलाल ॥३॥

(नभसि श्रवणं दत्वा) साधु, साधु ! किं कथयसि खलु ? 'तत्सभा-समम् एतत् ते सदः निजगुणगणोत्कर्षाऽऽनन्दितम् आचरितुम् उचितम्' इति ? मनोरममेव भणसि । तद् भवतु । प्रिये ! आगम्यताम् ।

(ततः प्रविशति नटी)

नटी—अज्जउत्त ! को णिओओ अणुचिट्ठिअदु ?
[आर्यपुत्र ! को नियोगोऽनुष्ठीयताम् ?]

सूत्रधारः—प्रिये ! सदसि निकषे निजगुणगणकथनम् एकार्थमनुगच्छतीव । तदत्र किमद्भुतं चरितमवतारयामः ?

नटी—(विहस्य) इअं खु किं भणीअदि । भवदोज्जेव कोऽवि गुणो इह अहिमदं पुरइस्सदि । अहवा जेण लोआणुरंजणं भोदि तहा अम्हाहि सव्वधा कदव्वं ।

भाग्यवश सभ तरहें सरस ओ विस्तृत ई सभा देवसभा सन अछि । एतय महादेव प्रसन्न भए अभय दान देथु । कविलाल एहि नगरी कें देखि रहल छथि ॥३॥

(आकाश दिस कान दए) वाह, वाह ! की कहल ? "ओही सभाक समान अहाँक ई सभा अपन गुणसभाक उन्नति सँ आनन्दित करबाक लेल उपयुक्त अछि" ? ई बड़ नीक कहल अछि । अच्छा, होअओ । प्रिये ! एम्हर आउ ।

(नटी प्रवेश करैत छथि)

नटी—आर्यपुत्र (प्राणनाथ) ! कोन काज मे लागल जाय ?

सूत्रधार—प्रिये ! सभारूपी कसौटी (निकष) पर अपन गुण सभक कथन निश्चय अर्थ (यथार्थता) पर जेना पहुँचि जाय तेना लगैत अछि । तें एहिठाम कोन अद्भुत चरित देखाओल जाय ?

नटी—(हँसि कें) ई की कहैत छी, अहीँक कोनो गुण एखनहि एतए अभीष्ट कार्य कें पूर्ण कए देत । अथवा जाहि सँ लोकसभक मनोरंजन होअए से हमरालोकनिक सर्वथा कर्त्तव्य थिक ।

[इदं खलु किं भण्यते ? भवतोऽत्रैव कोऽपि गुण इह अभिमतं पूरयिष्यति । अथवा येन लोकानुरञ्जनं भवति तथा अस्माभिः सर्वथा कर्त्तव्यम् ।]

सूत्रधारः—एवमेव, अत्र कः सन्देहः । स्मृतिमभिनीय गद्येन कथयति) जगदखण्डमण्डल विरुद्ध-दुरितान्धकारि-विखण्ड-प्रचण्ड-मार्तण्डस्य हिमगिरि-नन्दिनी-वदन - सरस-सरोज - मकरन्दाऽऽस्वादनसन्मनोमिलिन्दस्य करुणा-पारावारस्य भगवतः श्रीविश्वेश्वरस्य सरस-पदपङ्कज-परागमुद्दिश्य ज्योतिर्वित्कविलालेन निर्मितं श्रीगौरीस्वयंवरनाटकमस्ति । तत् सङ्गीतकं क्रियताम् । तर्हि तच्चरितम् उपहारीकरोमीश्वुचितम् । तदलं नर्त्तनारम्भ-विलम्बेन । श्रीगौरीशङ्कर-प्रवेशकं कृत्वा निवर्त्तयामः ।

(इति निष्क्रान्तौ)

॥ इति प्रस्तावना ॥

सूत्रधार यथार्थ कहल अछि, ताहि मे कोन सन्देह । (मौन पाठ्याक अभिनय कए गद्य द्वारा कहैत छथि) 'सम्पूर्ण संसारमण्डलक विरुद्ध पाप ओ पापस्वरूप अन्धकासुररूपी मृणाल = कमलनाल (बिस) क खण्डक लेल प्रखर सूर्यस्वरूप', 'हिमालयक पुत्रीक मुखरूपी सरस कमलक परागक आस्वादन मे एकाग्र भौंरास्वरूप' दयाक समुद्र भगवान् श्रीविश्वेश्वरक सरस चरणकमलक परागक उद्देश्य कए कें (प्राप्तिक हेतु) ज्योतिष शास्त्रक वेत्ता कविवर लालक बनाओल श्रीगौरीस्वयंवर नाटक छन्हि । ताहि लेल सङ्गीत प्रारम्भ करू । तखन ओएह चरित देल जाए (देखाबी) से उचित थिक तें आब नाचमे विलम्ब कथीक ? श्रीगौरी-शङ्करक प्रवेशक (सज्जा) कएकें घुरैत छी ।

(दुहू प्रस्थान करैत छथि)

प्रस्तावना समाप्त

प्रथमोऽङ्कः

(तत्राऽऽदौ[1] तपोवने तपोरूढः श्रीशङ्करः प्रविशति ।)

भैरवीरागे गीतम् – २

आएल जगतपति देव महेश । शङ्कर नाम भयङ्कर भेस ॥
लाएल तप तपोवन साधि । आसन लाए लगाए समाधि ॥
आसन जटिल बसन खाल । निकट विकट भूत-बेताल ॥
बीतल एहि विधि बहुत काल । कर खिआएह मुण्डक माल ॥
भवक भगत भनए लाल । भगत जगत होअ नेहाल ॥

सखीगण-समायुता मुक्ता-मण्डित[2]-भूषणा ।
आगता सा विशालाक्षी विनोदाय तपोवने ॥४॥

प्रथम अङ्क

(ताहिमे पहिने तपोवन मे तपस्या मे लागल श्रीशंकर प्रवेश करैत छथि)

भैरवी-राग मे गीत—२

संसारक पति भगवान् महादेव अएलाह जनिक नाम तँ शङ्कर(कल्याणकारी) थिकन्हि मुदा भेष डराओन छन्हि । तपोवन मे नीकजकाँ तपस्या ठनने छथि ओ आसन पर समाधि लगओने छथि । जटिल (अत्यन्त कठिन) योगासन लगओने छथि, चामक (बाघ आदिक) वस्त्र पहिरने छथि ओ लगमे विकराल भूत ओ बेताल छन्हि । एहि तरहेँ तपस्या करैत बहुत दिन बीति गेल । ततेक दिन बीतल जे हाथक मुण्डक माला (जप करैत करैत) खिआए गेल । महादेवक (भवक) भक्त लाल कवि कहैत छथि जे भक्त संसार मे कृतार्थ भए जाइत अछि ।

(एहि बीच) सखीसभक संग मोती सँ छाड़ल गहना पहिरने विशाल आँखिवाली (पार्वती) तपोवन मे खेलाइक लेल अएलीह ।४।

---

१ - पुन नेपथ्ये - ह० । २ - भूषित - ह० ।

(ततः सख्या च समं गौरी प्रविशति)

मालवरागे गीतम् – ३

अम्बर ललित वलित शिर केश । देल गिरिराज दुलहि परवेश ॥
सखि संग रंग कर मन अनुमानि । देखए तपोवन आइलि भवानि ॥
भमि-भमि हेरल लता तरुमूल । तोरलन्हि निअकर नवदल फूल ॥
विधिवस भए गेल एहन संयोग । देखलनि शंकर करइते जोग ॥
कह कविलाल विनति कर जोरि । लागल कहए सखी सौं गौरि ॥

(सखीमधिकृत्य गौरी गीतेन कथयति)

धनाश्रीरागे गीतम्--४

आगे माइ, जोगिआ एक अदभुत[1],
भूतगण संचर हे ॥ध्रु०॥
देखिअ तपोवन, हरलन्हि मोर मन हे ।
आगे माइ, हमे न जाएब निज वास,
पास तेजि हिनकर हे ॥

(सखीक संग गौरी सेहो प्रवेश करैत छथि)

मालवराग मे गीत—३

सुन्दर वस्त्र पहिरने, माथ पर केश कें सजओने गिरिराज हिमालयक कन्या प्रवेश करैत छथि । सखी सभक संग विलास करैत मन मे निश्चय कए कें तपोवन देखए गौरी अएलीह । घूमि घूमि कें लती ओ गाछक जडि कें देखैत अपना हाथें नव पात्तीवला फूल तोड़लनि । भाग्यवश एहन संयोग (अवसर) आबि गेल जे योग साधन करैत महादेव कें गौरी देखि गेलथिन्ह । लालकवि कहैत छथि जे तखन गौरी विनयपूर्वक कल जोड़ि सखी कें कहय लगलथिन्ह ॥

(सखी कें पकड़ि गौरी गीत द्वारा कहैत छथिन)

धनाश्री-राग मे गीत—४

माइ गे माए !! एकटा एहिठाम अद्भुत योगी छथि जनिका लग भूत सब टहलैत छन्हि । तपोवन मे ओएह देखअनु जे हमर मन हरिलेलनि

---

1 - 'भूत भूत' मे यमक अलंकार । 'आन आन' मे सेहो ।

थिका त्रिभुवनपति, हमरा ओहे गति हे ।
आगे माइ, जाह सबहु फिरि गेह,
नेह जनु बिसरह हे ॥
असन गरल कर, बसन बघम्बर हे ।
आगे माइ बरदक पिठि असवार,
छार तन अभरन हे ॥
उर पर विषधर, चान तिलक कर हे ।
आगे माइ, हरलनि हमर गेआन,
आन नहि मन पड़ हे ॥
सुकवि लाल कह कें बड़ हिनतह हे ।
आगे माइ, सखि तेजि रहलि भवानि,
जानि शिवशंकर हे ॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

(ततो हरपरिचर्यया गौर्या बहुतरदिनान्यतीतानि) ॥

× × × × × ×

अछि । माइ गे माइ !! हम हिनक लग छोड़ि कें अपन गामघर नहि जाएब । ई तीनू लोकक पति थिकाह ओ हमर गति ओएह थिकाह । तें तों सभ फिरि कें घर जाह, मुदा, हमरा नहि बिसरिहह । ई विष (गरल) भोजन (असन) करैत छथि ओ बाघक छालक कपड़ा पहिरैत छथि, बड़दक पीठ पर चढ़ैत छथि ओ देह मे छाउर गहना बनल छनि। छाती पर साप छनि ओ चन्द्रमाक तिलक कएने छथि । ई हमर ज्ञान हरि लेलनि अछि जाहि सौं आन क्यो मने ने पड़ैत अछि । सुकवि लाल कहैत छथि जे हिनका सौं बेष के अछि ? (अर्थात् क्यो नहि)। तें हिनका शिव ओ शंकर बूझि गौरी सखी कें छोड़ि एहिठाम (एकसरे) रहि गेलीह ॥

(सभ चल गेल)

(एकर बाद महादेवक सेवा करैत गौरी बहुत दिन बिता देलनि ।)

[विष्कम्भकः]

तत्राऽन्तरे—

*लखहर [गीतम्]--५

अवतरल अतिबल तारकासुर, मन्द, भल नहि जान यो ।
सकल सुरवर विकल कर बड़, धूमकेतु - समान यो ॥
भइए आकुल कमल - आसन, सबहु पूछल जाए यो ।
करब की परकार कहु प्रभु तुरित एकर उपाए यो ॥
कह विरञ्चि विचारि निअ हिअ, जुगुति फूर न आन यो ।
गौरि सुत विघनेश, तन्हिसहु, एकर अछि अवसान यो ॥
सुनि ई भन पाकशासन, आनविधि न निवाह यो ।
करिअ तेहन विचार जे होअ तुरित गौरि विवाह यो ॥
तखन सुरपति कहल मनसिज, जकर जे अधिकार यो ।
जाए सत्वर करए चाहिअ, शिव शरीर विकार यो ॥

ताही बीच (गौरीक शिवपरिचर्या मे लगलाक बाद एखन धरि)—

लखहर गीत—५

महान् बलवान् मूर्ख (मन्द) तारकासुर अवतार लेलक अछि जे लोकक नीक करब नहि जनैत अछि, सभ देवता कें धूमकेतु (पुच्छल तारा, नाशकारक) जकाँ अतिविकल कए देने छनि। सभ क्यो व्याकुल भए कें ब्रह्माक (कमल आसन) लग जाए पुछलथिन्ह जे हमरालोकनि कोन प्रकारें (तरहें) की करी तकर उपाय झट दए कहु हे प्रभु । ब्रह्मा (विरञ्चि) विचारि कें कहलथिन जे आन कोनो उपाय नहि फुरैत अछि, गौरीक बालक विघ्नेश (विघ्न-बाधाक नाशक गणेशजी) होएथिन्ह तनिकें सँ एकर नाश होयत। ई सुनि कें इन्द्र (पाकशासन) कहलाह जे (विघ्नेशक उत्पत्ति) आनतरहें नहि भए सकैछ, से विचार करु जाहि सँ तुरत गौरीक विवाह होअए। तखन इन्द्र कामदेव (मनसिज) कें कहलथिन एहि कार्य मे जनिक जे अधिकार से तुरत जाए कें महादेवक

सङ्ग लइए बसन्त रतिपति, कएल सुदिढ़ गेआन यो ।
चलल आनन मोद मातल, हरए हरक धेआन यो ॥
सुकवि लाल अकाल भेल, बसन्त-कालिन काल यो ।
परम सुललित लाग चहु दिश, लता-मञ्जुल-माल यो ॥

(अथ वसन्त-वर्णनम्)

[लखहर गीतम्]--६ (क)

ऋतुराज सरस विराज दश दिश, सबहु सँ एक सार यो ।
कुञ्ज गुञ्जर मत्त मधुकर, करए भनभनकार यो ॥
*वारि बारि नेवारि चम्पक कुन्द सुन्दर भास यो ।
जवा केतकि मालती नवमल्लिका परगास यो ॥
कमल कुमुद - कलाप किंशुक, नव नागेसर फल यो ।
चारु यूथी जातिका, करवीर वृन्द अमूल यो ॥
मुनिहु मानस मोह - कारक, परम उर उनमाद यो ।
अङ्ग—अङ्ग अनङ्ग संगत, तरुण करए विलास यो ॥

शरीर मे विकार बनाउ। बसन्त ऋतु कें संग लए कें कामदेव (रतिपति) अपन ज्ञान कें स्थिर कए लेलनि। मुँह पर प्रसन्नताक लहरि पसरल कामदेव महादेवक ध्यान भंग करबा लेल चललाह। कविलाल कहैत छथि जे तेखन असमय मे बसन्त समय आबि गेल, चारू दिस अत्यन्त सुन्दर भए गेल, लताक सुन्दर समुदाय देखाय लागल ॥

बसन्तक वर्णन—गीत—६(क)

रसमय वसन्त ऋतु सभ सँ उत्कृष्टरूप सँ दशो दिशा मे विराजमान अछि। कुञ्ज (लतागृह) सभ मे मदमातल भौंरा सभ गुञ्जन करैत एम्हर ओम्हर भनभनाए रहल अछि। प्रत्येक वाटिका मे नेवारि (कुन्दफूलक प्रभेद), चम्पा ओ कुन्दक फूल सुन्दर लागि रहल अछि। ओड़हुल, केओड़ा, मालती ओ नवमल्लिका (चमेलीक प्रभेद) फूल सभ फुलाएल अछि। कमल, कुमुदिनीक समूह (कलाप), पलाश, नागके-

वलित वन सहकार पल्लव, ललित कोकिल - नाद यो ।
सुमन—परिमल मोद—पूरित, जगत पर ऋतुराज यो ॥
एहन अवसर पाए मनसिज, जाए कए परवेश यो ।
कुसुम - बान जहान वश कर, परम सुन्दर भेष यो ॥

(ततः अनाकलितं कामदेवः प्रविशति)
(सन्निधानमागत्य)

[लखहर गीतम]--६ (ख)

[1]कएल निज—परहार हर पर, चूत—सायक साधि यो ।
हेरल कम्पि कोहाए शंकर, छूटल सकल समाधि यो ॥
त्रास आकुल देवता—गन, तेज उठल अपार यो ।
हरक भाल हुताश मनसिज, भेल जरिकहु छार यो ॥
सुकवि लाल अनाथ—जन-गति, सहत के अभ्-दाप यो ।
सूनि आकुलि परम मानस, रती करए विलाप यो ॥

सर, सुन्दर जूही, चमेली, करवीरक समूह ई अमूल्य फूल सब मुनिलोक-निहुँक मन कें मोहि लेछ आ हृदय मे अत्यन्त उन्माद (बेचैनी) आनि देछ । अङ्ग अङ्ग मे कामसँ भरल युवक, विलास करैत अछि । वन मे आमक पल्लव शोभित अछि आ ताहिपर कोइलीक शब्द भए रहल अछि। फूलक सुगन्धि सँ पूर्ण संसारपर वसन्त आबि गेल । एहन अवसर पर कामदेव प्रवेश करैत छथि । हुनक फूलक बाण संसार कें वश मे करैत अछि एवं ओ सुन्दर वेश बनओने छथि ॥

(तखन अनिच्छापूर्वक कामदेव प्रवेश करैत छथि)
(लग आबि)— (लखहर गीत)—६ (ख)

परहार = प्रहार । चूत-सायक = आमक मंजरीक बाण । कोहाए = क्रोधित भए । त्रास = भय सँ । भाल-हुताश = कपार परक अग्नि सँ । मनसिज = कामदेव । दाप = दर्प = अभिमान । मानस = मन मे ।

१ - गीतसब सामान्य जनभाषा मे अछि । अतः एतय सँ केवल कठिन शब्दक अर्थ देल जाइत अछि ।

(एतच्छ्रुत्वा विरह-हुतवह-ज्वाल-जाल-व्याकुलतरा रतिः प्रविश्य निःश्वस्य कथयति)—

करुणा-मालवरागे गीतम-७

हे हर ! कओन हरल मोर नाह ॥ध्रु०॥
अछल अभेद, कोद नहि भरमहुँ, सेहुओ न मन अवगाह ।
पल विशलेष, पहर सम मानिअ, कोन परि होएत निबाह ॥
शोक कलाप, दाप दह मानस, उर उपजावए धाह ।
विरहक अवधि, अबूह पड़ल छिअ, चौदिस लागू अथाह ॥
मानक आधि, बेआधि धाधि बड़, रङ्ग-रभस गेल दूर ।
विहि बड़ भेल, मोर कोन निरदय, हरलन्हि शिरक सिन्दूर ॥
कुसुमक बान, जहान जकर वश, सभ गुन आगर कन्त ।
से मोर, साथ हाथ धए लाओल कि कएल बन्धु वसन्त ॥
सुकवि लाल कह धैरज धए रह, हरि-सुत होएत अनंग ।
ओ मनमथ तोहेँ, रती पलटि पुनु, होएत तेहि विधि संग ॥

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

(ई समाचार (काम-दहन) सूनि विरहक आगिक धधराक समूह सँ अत्यन्त व्याकुल रति प्रवेश कए तेज श्वास लैत कहैत छथि ।)

करुणा-मालवराग मे गीत—७

नाह = नाथ (स्वामी) । भरमहुँ = भ्रमहुँ सँ । मन अवगाह = मन मे विचारलक । विशलेष = वियोग । कलाप = समूह । दाप दह = दर्प सँ जरबैत अछि । आधि = आधा वा मनक पीड़ा । धाधि = धधरा (ज्वाला) । विहि = धाता । जहान = संसार । बन्धु-वसन्त = मित्र वसन्त हमर पतिकें हाथ पकड़ि आनि कोन काण्ड कएलनि । हरि-सुत = श्रीकृष्णक पुत्रक रूप मे । अनंग = कामदेव । मनमथ = कामदेव ॥

(सभ बहार भए गेल)

(तस्मादपसृत्य गौरी सखीसहिता निराकाङ्क्षित-हृदया महत्त-पःपरायणा बभूव ।)

[इति विष्कम्भकः[1]]

(पुनरागत्य जटिलवेषेण शङ्करः प्रविशति)

आसावरी-रागे--८

जटिल भेषें देल परवेश । भसम-भूषित कपिल केश ॥
छालक वसन कए लेल काछ । आठहु आङ बान्हि रुदराछ ॥
भाङक झोरा काँख बोकान । माँगथि फिरि फिरि भीख दोकान ॥
कान्ह बिराजित उपवीत शेष । काहु न बूझि पड़ए शिव भेष[१] ॥
सुकवि चतुर लाल कर गोचर[२] । गौरिहि गमए आएल हर ॥

(तपस्यारूढ़ां गौरीमवलोक्य शंकरः कथयति)

शङ्करः—अयि मृगाक्षि बाले ! कथमिदमतिदुष्करं [३]तपः कल्पयसि ?

सखी—भगवन् ! पिनाकपाणि-पाणिग्रहणार्थमेव ।

(ओहिठाम = महादेवक लग सँ हटि कें गौरी सखीक संग हृदयक अभि-लाषाकें दूर कए महान् तपस्या मे संलग्न भेलीह ।)

[विष्कम्भक समाप्त]

(फेर आबि कें जटा धारणकयल वेष सँ शंकर प्रवेश करैत छथि ।)

आसावरी राग मे गीत—८

परवेश = प्रवेश । कपिल = केश । बसन = वस्त्र । बोकान = बोरा ।
उपवीत शेष = शेषनागक जनेउ । गमए = जँचबाक लेल ॥

(तपस्या सँ संलग्न गौरी कें देखि महादेव कहैत छथि ।)

शंकर—ऐ मृगनयनी बाला ! किएक ई दुःसाध्य तपस्या करैत छी ?

सखी—भगवन् ! महादेव सँ विवाहक हेतुए ।

---

1 - भूत वा भविष्य कथांशक संक्षेप मे सूचना विष्कम्भक कहबैत अछि । नायिका कें सट्टक सँ इएह भिन्न करैछ ।

१ - शिव विशेष - प्र । २ - लाल गोचर - प्र । ३ - तपमाकलयसि - प्र ।

शङ्करः—(विहस्य श्लोकेन कथयति)—

वपु विरूपाक्षमलक्ष्य जन्मता
दिगम्बरत्वेन निवेदितं वसु ।
वरेषु यद् बालमृगाक्षि ! मृग्यते
तदस्ति किं व्यस्तमपि त्रिलोचने ॥६॥

[कुमारसम्भवमहाकाव्ये ५-७२]

(श्लोकार्थे गीतं गायति)

भैरवी रागे--९

बरगुन एकओ न परमन आनि । कथि लय एत तप कएल भवानि ॥
तीनि नयन शिर, तथिहु हुताश । उर ऊपर विषधरक निवास ॥
कतए सँ उतपन केओ न जान । भूत-प्रेत संग फिरथि मशान ॥
अनुदिन बसुहिन, वसन अकाश । नीलकण्ठ गर करए गरास ॥
सुकवि लाल कह नयन उबेरि । रोखलि गौरि सखी मुख हेरि ॥

(गौरी सक्रोधं सखीमुखमवलोक्य कथयति श्लोकेन)

शंकर—(हँसि कें श्लोक द्वारा कहैत छथि)—हुनका (महादेवकें) देह विरूपे (विकट रूप) छन्हि, जन्मक पतो नहि छनि (जे जाति बूझल जाय), नाङट भेला सँ धनो विदिते छन्हि । अतः हे बालमृगनयनी ! वर मे जे जे ताकल जाइत छैक (रूप कुल ओ धन) से त्रिलोचन (तीन आँखिवला कुरूप महादेव) मे फुटाइयो कें एको टा छनि ?

(श्लोकक अर्थमे गीत गबैत छथि)

भैरवी रागमे—१०

पर-मन = अनका मनें । तथिहु हुताश = ताहूपर आगि । बसुहिन = धनहीन । गर = गरल (विष), 'नीलकण्ठ कर गरल गरास' ई पाठ उचित । उबेरि = फेरि, हटाए । रोखलि = क्रोधित भेलीह ॥

(गौरी तमसाए सखी दिस ताकि श्लोक द्वारा कहैत छथि)

गौरी— निवार्यतामालि ! किमप्ययं बटुः
पुन विवक्षुः स्फुरितोत्तराधरः ।
न केवलं यो महतोऽपभाषते
शृणोति तस्मादपि यः स पापभाक् ॥७॥

अपि च—
इतो गमिष्याम्यथवेति वादिनी
चचाल बाला स्तनभिन्नवल्कला ।
स्वरूपमास्थाय च तां कृतस्मिता
समाललम्बे वृषराजकेतनः ॥८॥
[कुमारसम्भवमहाकाव्ये ५--८३, ८४]

(श्लोकार्थं गीतं गायति)

[४]एकतारा- रागे गीतम् – १०

हे सखि ! सबहुँ सुनै छी गारि । ककरहु तह नहि होअ निवारि ॥ध्रु०॥
असत वचन कहलैं अनुताप । बड़जन निन्दा सुनलहुँ पाप ॥

गौरी—सखी ! एहि बटक कैं (महादेवक निन्दा सँ) मना करियन्हु । ई फेर बजबाक लेल ठोर पटपटाए रहल छथि । जे महापुरुषक निन्दा करैत अछि केवल सएह नहि पापभागी होइत अछि अपितु ओकरा सँ जे सुनैत अछि सेहो ॥

आओरो—'अथवा हमहीं एतए सँ चलि जाइत छी' ई कहैत बाला (तरुणी गौरी) चलि देलनि जाहि सँ (वेग एवं स्तनक विशालताक कारणेँ) स्तनक द्वारा ओकर आवरण वल्कल फाटि गेलनि कि एही अवसर पर महादेव (वृषराज-केतन = बसहा पर ध्वजवला वा बसहा-रूप चिह्नवला) अपन रूप धारण कए मुसुकाइत हुनक (गौरीक) आलिङ्गन कए लेल ॥

(श्लोकक अर्थमे गीत गबैत छथि)—

एकतारा राग मे गीत—११

तह = सँ । अनुताप = दुःख । जटिल = जटावला (महादेव) । करतल

---

[४] भैरवी - ह० ।

एकरा कहहु जाओ फिरि गाँओ । नहि तँ हमे छोड़इ छी ठाँओ ॥
ई कहि चरण चलाओल जाए[५] । धएल जटिल हँसि करतल धाए[६] ॥
कहलन्हि शंकर हमरे नाम । करब विवाह जाए[७] निजधाम ॥
एतबा सुनि गौरि हरषित भेलि । तहिखन तप तेजि मन्दिर गेलि ॥
सुकवि लाल नहि थिर रह काल । सुदिन सदाशिव भेल दयाल ॥

[इति निष्क्रान्ताः सर्वे]

× × × × × ×

(महादेवस्तस्माद् देशादागत्य नारदमाहूतवान्)

शंकरः—भवद्भिः हिमालयो वक्तव्यो मह्यं सुतामर्पयेति ।
नारदः—यथाज्ञापयति भवान् । (इत्युक्त्वा प्रचलितः) ।

आसावरी-रागे गीतम्--११

हे माइ ! नारद घटकराज । हेमत सँ अछि समिलन[८] काज ।
गिरिसुता[९] पदपल्लव आद । बीहल विहि विवाह उपाय ॥
आगाँ ठाढ़ भेल कर जोरि । कहलनि मुनि 'हर माङल गौरि' ॥
तेही काजे पठओलनि मोहि । सेह कहए हम अएलहुँ तोहि ॥

धाए = हाथ पकड़ि कैं ।

[सभ बहार भए जाइतछथि]

(महादेव ओहिठाम सँ = गौरीक तपस्या-स्थान सँ आबि नारदकेँ बजओल थिन्ह ।)

शंकर—(नारद !)अहाँ हिमालयकेँ कहियन्हु जे 'हमरा बेटी (गौरी) दिअओ'।
नारद—अपनेक जे आज्ञा । (ई कहि चलि देलनि) ।

आसावरी-रागमे गीत—१२

हेमत = हिमवान (हिमालय) । बीहल विहि = विधाता विधान

---

[५] - जाओ - । [६] - धाओ ह० । [७] - जाएब - प्र । [८] - अछि मिलन - प्र० ।
[९] - गिरिसुता - प्र० ।

हेमत से सुनि हरषित भेल । दौड़ि मनाइनि निकट गेल ॥
करब हमे जे पड़ए निवाह । गौरी-शङ्कर होअ विवाह ॥

(ततो मेना कथयति)—

गीतम् – १२

घर[9] घर भरमि जनम-नित, तनिकाँ कैहन[9] विवाह ।
से[10] हम करब गौरि-बर, ई आब कतए निवाह ॥
कतए भवन कहाँ आङन, कतए बाप[11] कहाँ माय ।
कतहु ठओर नहि ठेहर, के कर एहन जमाय ॥
के कएल एहु असोजन, केओ न हिनक परिवार ।
जे कर [12]हिनक निबन्धन, धिक् धिक से पजियार ॥
कुल परिवार एकओ नहि, परिजन भूत—बेताल ।
देखि देखि झूर होअ तन, के सह हृदयक साल ॥
सुकवि लाल सुनु सुन्दरि, ई नहि मन अवगाह ।
जे अछि जकर विवाहुलि तनिकाँ सेह पए नाह ॥

(ततः प्रविशति देवसमूहः)

कएल । मनाइनि = मेना (हिमालयक पत्नी) । निबाह = निमहुब ।

(तखन मेना कहैत छथि) —

गीत – १२

जनम-नित = भरि जनम । निवाह = निमहुत । असोजन = अरवजन (अजाति) । निबन्धन = पंजिक पोथी मे नाम चढ़ाएब । विवाहुलि = विवाहार्थ विधाताक द्वारा निर्धारित ।

(तखन देवताक समूह प्रवेश करैत अछि)

---

१ - कविलालक ई गीत गायक-परम्परावश विद्यापतिक संग्रह मे मिलि गेल अछि । द्रष्टव्य – [१] मिथर्सनक संग्रह गीत सं० - ८१ तथा [२] गोविन्द झा-विद्यापति-गीतावली गीतसं० - ३४ ।

१० - से पुनु होएत - ह० । ११-बाप ओ माय ह० । १२ - एकर - प्र० ।

ललित-रागे गीतम्--१३

ऐरावत चढ़ि सुरपति उपगत, हंस - गमन विहि आउ ।
गरुड़ चढ़ल गरुड़ासन अएलाह, सबहि मीलि ठहराउ ॥
पवन विचारि बारि जनु लाबिअ, तुरित विदूषक जाउ ।
करि बरिआत बनाए सबहि विधि, शंकर बर लए आउ ॥
व्यास आए साइत भल साधल, शुभ शुभ गाइनि गाव ।
पहर-महर चहुदिशि पुर बाजल, मण्डप वेदि बनाव ॥
मुनि फिरि आए मनाए बुझाओल हेमत भाषल बात ।
भूत-परेत-पिशाच-जाल लए, हर साजल बरिआत ॥
सकवि गणक कह चलल दिगम्बर, सुन्दर बसहु पलानि ।
तुरही शंख मृदङ्ग रङ्ग कत, हर हर करेत भवानि ॥

(अथ पिनाकपाणि: पाणिग्रहणार्थं प्रचलित:)

दण्डक-पहरिआ-रागे गीतम्--१४

चलल शंकर करए स्वयंवर
ललित कटितट पट बघम्बर,
बर दिगम्बर रे ॥
कोटि लोचन --हीन सहचर,
सतत बिनु पशु पगुहि पथ चल,
महा उर [घर], बदन अहिवर
देखि होअ डर रे ॥

ललित-रागमे गीत—१३

सुरपति उपगत = इन्द्र अएलाह । विहि = ब्रह्मा । गरुड़ासन = विष्णु । बारि = जल । साइत = विवाहक सामग्री । हेमत = हिमालय । पलानि = सजाए ॥

(एकर बाद महादेव विवाह करए चललाह)

दण्डक पहरिआ रागमे गीत—१४

कटितट = डाँर मे । लोचन-हीन = आन्हर । सहचर = संगी । पगुहि = पयरहि । महा उर घर = पैघ छाती पर साँपक मुँह धरैत । काहु = ककरहु

काहु बाहु न जंघ हिन—गल
करए गन—गन नाद अनुपल
संग भूत वेताल अतिबल
रंग भल—भल रे ॥

जेहन सब कर सतत सेवा
ताहि विजया धथूर मेवा
बुझि पड़ए ने कतए के वा
परम देवा रे ॥

कुपित अगणित दुरित—हर्त्ता
वदन चन्द्र—मयूख—धर्त्ता
महिष—मर्दिनि - विहित भर्त्ता
जगत—कर्त्ता रे ॥

सुकवि लाल अनाथ—जन—गति
वामदेवक चरण • रति • मति
देहु अभिमत, करब नति कति
आन गति नहि रे ॥

द्वितीयं दण्डकं, मालवरागे गीतम्---१५

भाल ललित विशाल-लोचन, चन्द्रमण्डित त्रिपुण्ड रे ।
भंग रंग अनंग खण्डित, गण्ड मण्डित मुण्ड रे ॥
समशान वास, पिशाच दास, निवास हास सुरंग रे ।
व्याल-जाल कपाल माल, विभूति-भूषित अंग रे ॥

ने बाँहि छैक आने जांघ । हिन गल = गरदनि सँ हीन । कुपित = तमसएला पर । दुरित-हर्त्ता = पापक नाश कएनिहार । चन्द्र-मयूख = चन्द्रमाक किरण । महिष-मर्दिनि = महिषासुरक नाशकएनिहारि भगवतीक । वाम-देव = महादेव । अभिमत = अभीष्ट ॥

द्वितीय-दण्डक-मालवराग मे गीत—१५

भाल = कपार पर । भंग रंग = भाङक उन्माद मे । अनंग = कामदेव ।

अति डिमिक डिम डिमि डमरु-नाद, विशाल लाल दयाल रे ।
धुनि मधुर भङ्ग मृदङ्ग सङ्कुल, ताल धत ततकाल रे ॥
भव्य भूत प्रचण्ड दूत, पिशाच शत वेताल रे ।
कर नाद तन-नन-ननन-लल—लल, नाच योगिनि-जाल रे ॥
सुकवि लाल विचारि निअ हिअ, सकल भेल सनाथ रे ।
एहि विधि सओँ चलु विआहए हरखि भोलानाथ रे ॥

(हरमुखं विलोक्य हिमगिरि-नगरनारी गीतेन कथयति)—

ललित-रागे गीतम् - १६

आएल नगर निकट बरिआत । देखए चललि पुरनागरि सात ॥
नाक हाथ दए चल दुइ-चारि । वर देखि हेमतकेँ देअ गारि ॥
धिक धिक से जे जोहल जमाए । देखिए दिगम्बर बाप न माए ॥
आगे माइ! एकओ न होअ मन जानि।कओने परि जनम गमाउति भवानि ॥
सकवि लाल भन सब मिलि आए । वरगुन मनाइनि कहलनि जाए ॥

(एतच्छ्रुत्वा मेना [13]स्वाशयं गीतेन कथयति)—

गण्ड = कल्ला पर (गरा मे मुण्डमाल पहिरला पर गण्डस्थल लग मुण्ड शोभित होएब स्वाभाविक) ।
व्याल-जाल = सापक समूह । भंग = गमन, अंश । ततकाल = ओही समय। नाद = आवाज ॥
(महादेवक मुह देखि हिमालयक नगरक जनीजाति गीत द्वारा कहैत छथि) —

ललित-राग मे गीत—१६

पुरनागरि = नगरीक चतुर युवतीगण । सात = बहुतो । नाक हाथ दए = वर सँ घृणा करैत । हेमत = हिमालय ॥
(ई सुनि मेना अपन अभिप्राय गीत द्वारा कहैत छथि)—

---

१३ • मेनाइवासं • प्र० ।

कोलाव-रागे गीतम् - १७

मेना से सुनि आकुलि भेलि । गौरि गोद गहि मन्दिर गेलि ।।
मारब बेटी मरब विष खाए । मोञ्ञो नहि हिनका करब जमाए ।।
फोरल पुरहर, ऐपन भाँग । सब भसिआएल सिर बहु गांग ।।
डाला हाथी घएलन्हि जाए । देलन्हि चौमुख-दीप मिझाए ।।
हेमत चरण परल कर जोड़ि । जानब नहि जनमलि छथि गौरि ।।
एकर नहि आब आन बचाय । हिनकहि कएने भेल[14] जमाए ।।
सुकवि लाल सबहि धए लेल । भनहि मनाइनि परिछए गेलि ।।

अथ परिछनि-गीतम् - १८

परिछए चललि मनाइनि । देखि घिघुआइलि गाइनि ।।
भालरि देल कोन[15] कर धरि । शिर बढ़िआइलि सुरसरि ।।
[16]कोन खोजल वर बाउर । तनु अनुलेपन छाउर ।।
शाँकर शंकर देल भाँग । अम्बर गगन[1] नगन आँग ।।

ललित-राग मे गीत—१७

आकुलि = बिकल । मोञ्ञो = हम । भाँग = भग्न कएल । सिर बहु = माथ सँ बहल । हेमत = हिमालय (मेना कें बुझबैत प्रार्थना करैत छथि) । भनहि = यथाविधि ।।

आब परिछनिक गीत—१८

परिछए = वरक परिछनि (परीक्षण) विधि करए । सुरसरि = गंगा । बाउर = विक्षिप्त । तनु = देह मे । अनुलेपन = चानन । शाँकर = विवाह

---

१४ - होएत - ह० । १५ - कओने - ह० । १६ - कओने - ह० ।

१—एहिठाम समानार्थक 'अम्बर ओ गगन' दु शब्द भिन्नार्थ मे संगहि प्रयुक्त भेल अछि । दुनूक अर्थ आकाश होइछ ओ एहिठाम अम्बरक अर्थ वस्त्र थिक । अतः पुनरुक्तवदाभास अलंकार भेल ।

नाक धरए नहि पावथि । फणिपति डर कर वारथि ।।
काछुक पीठि लेसल दीप । ऐपन बेदी मण्डप नीप ।।
मूसर धर हर एकसर । के संगे कुटत अठोङ्गर ।।
पुरहित वेद भनिअ भल । पीअर ताग लपेटल ।।
आमक पात अछत भरि । कङ्कण बन्हलनि कर धरि ।।
सुकवि लाल मन कौतुक बनाए । गौरि सहित हर कोबर जाए ।।

अथ कोलाव-रागे गीतम्--१९

शुभ शुभ मंगल चारि । हरषि चलल हर कोबर दुआरि ।।ध्रु०।।
गौरि सहोदर, दौड़ि देहरि धर, शंकर लज्जित भेला ।
कोटि यतन कए, अभिमत भरि दए, अनुपम मन्दिर गेला ।।
दुइ कुमारि नारिगण हिलिमिलि, पटतर झपलन्हि आनि ।
चिन्हँसल अपने विचारि महादेव, करतल धएल भवानि ।।
कामरूप के नएना[17]-योगिनि, से कएल अपरुब भेस ।
गौरि सहित आनन अति उमगल, बेदी आएल महेश ।।
(नएना वदति)—

मे वरक ओहिठाम सँ कन्याक ओहिठाम आएल गोसाउनिक लेल नैवेद्य । अम्बर गगन = वस्त्र आकाशे थिकनि । आँग = देह । वारथि = हटबैत छथि ।।

आब कोलाव राग मे गीत—१९

मंगल चारि = आगू निर्दिष्ट चारू आनन्ददायक मंगल—(१) गौरीक भाए दोआरि छेकल, (२) यत्नपूर्वक हुनका अभिमत (अभीष्ट) दय घर गेलाह, (३) दुइ कुमारि (एक गौरी ओ दोसर आन) कपड़ा तर झाँपल छल, महादेव कें चिन्हए कहल गेलनि तँ गौरी कें धए लेलथिन ओ (४) अपूर्व भेष मे नेना-जोगिनि छल । कामरूप = कामाख्या (आसामराज्य) । नेना-योगिनि = तन्त्रशास्त्रप्रसिद्ध देवता । आनन = मुह अति आह्लादित ।।
(नएना (देवता) बजैत छथि)—

---

१७ - नेना (नेना) - प्र० ।

कोलाव-रागे गीतम्--२०

विहित[१८] योगिनी हम महीतल, कामरूप मोर वास ।
जबे तबे गमन महीतल, नहि तञों भवन अकास ॥
रवि शशि वशकए राखिअ, भाखिअ त्रिभुवन बात ।
कहुखन जञों हम चाहिअ, शोषिअ सागर सात ॥
धरणी आयु धरिअ पुनु, हमहि करिअ दिन - राति ।
दूलह होएत दुलहिवश, एकर कओन बिसाति ॥
जकरा जे न सोहावए, से कर तकर अभिलाष ।
गुणवश मण्डुक सम कए, एक तोहें तोहें भाष ॥
काक पंख रह कारिअ, बिनु दामहि होअ दास ।
भए रह मरद तनिक वश, काटथि बड़दक घास ॥
सुकवि लाल भन मन गुनि, जोगिनि जगत अपार ।
से जे जखन करए मन, तखन मेटए के पार ॥

(मण्डपे हिमालयः कथयति)

हिमालयः—भोः पुरोहित ! कन्यादान-समयः सपदि सम्भूतः । विधीयतां च गोत्राध्यायः ।

कोलाव राग मे गीत—२०

विहित = विधान कएल गेल, 'विदित' ई पाठान्तरक 'प्रसिद्ध' अर्थ । महीतल = पृथ्वीपर । कामरूप = कामाख्या। बिसाति = विषाद (दुःख) । जकरा जे न = जाहि नारी कें जे पुरुष नहि चाहैछ से नारी ताही पुरुषक अभिलाषा करैछ । गुणवश = ककरहु गुण देखि । मण्डुक = बेङ । काक = कौआक पाँखि सन जे (नर) कारी रहत से ॥

(मड़वा पर हिमालय बजैत छथि)

हिमालय—अओ पुरोहित ! कन्यादानक समय झट आबि गेल । गोत्राध्याय आरम्भ करू ।

---

१८ – विदित योगिनी हमे – ह० ।

पुरोहितः—(विमृश्य) अहो ! गिरिराज, नास्य जनक-पितामह-प्रपितामहानां नाम जानामि । तन्निगदतु साम्प्रतमयम् ।

(सलज्जः शिवो नतग्रीवो ब्रह्माणम् अधस्तिर्यग् दृष्ट्वा तूष्णीं तस्थौ ।)

ब्रह्मा—(साट्टहासम्) अहा ! पुरोहित, अस्य प्रपितामहस्य वेदकण्ठ इति, पितामहस्योग्रकण्ठ इति, पितुः श्रीकण्ठ इति, अस्य च नीलकण्ठ इति नाम यथोचितमधीयताम् ।

(पुरोहितास्तथा विवाहविधे विधानं करोति)

ललित-रागे गीतम् – २१

गौरी-शंकर मण्डप गेल । बड़ कठिन पुरहित काँ भेल ॥
बाप पितामह नाम नहि [१९]जान । कोनपरि होयत कन्यादान ॥
तिनू नाम बरहिक कहि देल । तेँ विधि गोत्र उच्चारण भेल ॥
[२०]पुरहित कएलनि अपन छुटानि । महा हरषमय भेल शूलपानि ॥
सुकवि लाल एहो अचरज भान । एहनो देखल विवाह-विधान ॥

पुरोहित—(विचारि) आहि रे बा ! गिरिराज, हिनक बाप पितामह ओ प्रपितामहक नाम नहि बुझल अछि । तेँ एखन इयेह कहथु ।

(लज्जित शिव मूड़ी झुकओने ब्रह्माक दिस नीचहि मुहेँ कनडेरिएँ ताकि चुप्पे रहैत छथि ।)

ब्रह्मा—(ठहक्का मारि) आह ! पुरोहित, हिनक प्रपितामहक वेदकण्ठ, पितामहक उग्रकण्ठ, पिताक श्रीकण्ठ ओ हिनक नीलकण्ठ नाम यथोचित रूपें पढ़िअन्हु ।

(पुरोहित तहिना विवाह-विधिक काज करैत छथि)

ललित – राग मे गीत – २१

कोन परि = कोन तरहेँ । शूलपानि = शूलपाणि (महादेव) ।

---

१९ – ने – ह० ।

२० – पुरहित कएलनि अपन छुटी । जे विधि निमहि देलनि उठी ॥ महाहरखमय भेल सुलपानि । मन मन मगन भेली भवानि ॥ – ह० ।

अथ सिन्दूरदानम् । गीतम्-२२

सिन्दूरदान तिनि इन्दुहि पओलन्हि, घोघट बाधक छाल ।
आओर बीधि विधान कएल हर, एक कपालक माल ।।
ब्रह्मा विष्णु मुनीन्द्र वेद भन, दुबि अच्छत शिर देला ।
सभ मन हरख, विषाद मेटाएल, निज निज गृह सभ गेला ।।
सुकवि लाल भन सुनहु भगत-जन, हरक विवाह विधाने ।
भुक्ति मुक्ति अभिमत फल दायक, के जग तनितहु आने ।।

बटगबनी गीतम्-२३

आँगुरि लाए लेल त्रिपुरारि । चललि कोबर गिरिराज-कुमारि ।।
लघु लघु पगु देअ पथ सुकुमारि । गावए मंगल सखि दुइ चारि ।।
हर देखि कौशल नयन निहारि । सिन्दुर धार देल एक नारि ।।
कोबर गेल हर हृदय विचारि । पओलन्हि गौरि पदारथ चारि ।।
सुकवि गणक भन अपद फारि । हरथु[1] दुरित गौरि हरखि निहारि ।।
(ततः कौतुक-लीलया अनिर्वचनीयाद्भुत-सुखमासाद्य [श्रीशङ्करः] कैलासपुर-गमनोत्सुको बभूव ।)

★ इति श्रीकविलाल-विरचितं[2] गौरीस्वयंवरनाटकं समाप्तम् ★

अथ सिन्दूरदानक गीत—२२

तिनि = ओ (गौरी) । इन्दुहि = चन्द्रमा लए कें (सोन, शनि, संख आदि लए कें सिन्दूरदान होइछ) । एक = एकटा विधि नव कएलनि जे कपालक माला देलथिन । विषाद = दुख । भुक्ति = भोग, मुक्ति = मोक्ष ।।

बटगबनी गीत—२३

त्रिपुरारि = महादेव । पगु = डेग । कौशल = कुशलतापूर्वक । नारि = नारीकें (गौरी कें) । दुरित = पाप ।।

(तखन कोबरा घरक लीला सँ अवर्णनीय अद्भुत सुख पाबि कें श्री-शङ्कर भगवान अपन नगर कैलास जएबाक लेल उद्यत भेलाह ।)

एहि प्रकारें श्रीकविलालक बनाओल गौरीस्वयंवरनाटक समाप्त भेल ।

१—ई पद एहि नाटिकाक 'भरत वाक्य'क काज करैछ । एहि तरहक आशय एहि नाटिकाक आन गीत मे कतहु नहि वर्णित अछि । तथापि खूब सम्भव जे 'भरत-वाक्य' वला श्लोक लेखक-प्रमादात् छूटि गेल हो ।

२—विरचिता गौरीस्वयंवरनाटिका समाप्ता—प्र० ।